[1987] 2 उम० नि० प० 111

इण्डियन आयल कारपोरेशन लिमिटेड

[बनाम]

बिहार राज्य और अन्य

13 अगस्त, 1986

न्यायमूर्ति वी० बालकृष्ण एराडी और एम० एम० दत्त

संविधान, 1950—अनुच्छेद 136 और 226—यदि न्यायालय कारण रहित आदेश द्वारा विशेष इजाज़त याचिका खारिज कर दे तो उसके पश्चात् अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय में उन्हीं विवाद्यकों का विचारण करने के लिए कोई वर्जन नहीं होगा।

प्रत्यर्थी सं० 3 अपीलार्थी कम्पनी में विक्रय अधिकारी था। उसकी पदच्युति का आदेश श्रम न्यायालय ने रद्द कर दिया। बहाल होने पर उसने भूतलक्षी रूप से उच्चतर वेतन की मांग की। यह मांग भी श्रम न्यायालय ने 11-3-1983 के अधिनिर्णय द्वारा मंजूर कर ली। उसके विरुद्ध अपीलार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अपील करने की विशेष इजाज़त के लिए याचिका फाइल की। यह याचिका उच्चतम न्यायालय ने केवल यह कह कर खारिज कर दी कि विशेष इजाज़त के लिए याचिका खारिज की जाती है। तत्पश्चात् अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय में संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका फाइल की। उच्च न्यायालय ने उसे ग्रहण करके प्रश्नगत अधिनिर्णय का कार्यान्वयन रोक दिया। उस पर प्रत्यर्थी ने उच्चतम न्यायालय में अपील करने की विशेष इजाजत के लिए याचिका फाइल की। वह उच्चतम न्यायालय ने खारिज कर दी।

जब रिट याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए आई तो प्रत्यर्थी ने आपत्ति की कि अधिनिर्णय के विरुद्ध अपील करने की विशेष इजाज़त की याचिका खारिज हो जाने के बाद उसी अधिनिर्णय के विरुद्ध अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका वर्जित हो जाती है। उच्च न्यायालय ने विकल्प के सिद्धांत को मानते हुए और यह कहते हुए कि अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष वैवेकिक है तो ऐसे मामले में नहीं दिया जाना चाहिए, रिट याचिका उसके गुणागुण पर विचार किए बिना खारिज कर दी। अतः विशेष इजाज़त लेकर उच्चतम न्यायालय में अपील की गई। प्रश्न इतना ही है कि अनुच्छेद 136 के अधीन अपील करने की विशेष इजाज़त के लिए याचिका कारण रहित आदेश द्वारा खारिज हो जाने पर क्या उसी विषय पर अनुच्छेद 226 के अधीन वर्जित होगी ? अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित—उच्चतम न्यायालय की स्पष्ट राय यह है कि उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत सही नहीं था तथा उच्च न्यायालय को रिट याचिका को आरम्भिक आधार पर खारिज किए बिना, उसके गुणागुण पर विचार करना चाहिए था। उन मामलों को छोड़कर, जिनमें विधि के अथवा सामान्य या सार्वजनिक महत्व के कुछ सारवान् प्रश्न अन्तर्वलित हों, अथवा जिनमें आक्षेपित आदेश अथवा निर्णय के परिणामस्वरूप स्पष्ट रूप से अन्याय हुआ हो, उच्चतम न्यायालय की नीति यह नहीं है कि वह विशेष इजाज़त

याचिकाओं पर विचार करे और संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इजाज़त दे। अतः किसी विशेष इजाज़त याचिका की किसी कारण रहित आदेश द्वारा आरम्भ में खारिजी किसी ऐसे निष्कर्ष को न्यायोचित नहीं ठहराती कि विशेष इजाजत याचिका में दी गई दलीलें उच्चतम न्यायालय ने आवश्यक विवक्षा द्वारा मामले के गुणागुण के आधार पर खारिज कर दी हैं। यह मताभिव्यक्ति भी की जा सकती है कि उच्चतम न्यायालय में कार्य के भारी बैंक लाग तथा नये मामलों के अंतर्वाह को प्रतिबंधित करने की आवश्यकता का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त कसौटी का कठोरता से पालन करते हुए उच्चतम न्यायालय की बहुधा यह परिपाटी रही है कि वह उन मामलों में विशेष इजाज़त नहीं देता है जिनमें पक्षकार संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन सम्बद्ध उच्च न्यायालय की शरण में जाकर कारगर अनुतोष का दावा नहीं कर सकता। बहुधा ऐसे मामलों में भी विशेष इजाज़त याचिकाएं कारण रहित आदेश पारित करके, विशेष रूप से उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए इन विनिर्णयों का ध्यान रखते हुए खारिज कर दी जाती हैं कि विशेष इजाज़त याचिका की ऐसी खारिजी के परिणामस्वरूप पक्षकार संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष की ईप्सा करने के संबंध में उच्च न्यायालय को समावेदन करने से प्रवारित नहीं होगा। ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा याची के लिए अपना द्वार बंद करने तथा विशेष इजाज़त याचिका की खारिजी के एक मात्र आधार पर उसे संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष प्रदान करने से इनकार करने के परिणामस्वरूप अत्यधिक कठिनाई और अन्याय की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी। (पैरा 6 और 8)

संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इजाज़त का दिया जाना निस्संदेह उच्च न्यायालय का विवेकाधिकार है किन्तु इस वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग सुस्थापित विधिक सिद्धांतों द्वारा नियंत्रित किया जाना है। इस विवेकाधिकार का प्रयोग उस दशा में सही प्रयोग नहीं होगा जब किसी रिट याचिका पर उसके गुणागुण के आधार पर विचार करने से केवल इस आधार पर इनकार कर दिया जाए कि याची द्वारा फाइल की गई विशेष इजाज़त याचिका किसी कारण रहित आदेश द्वारा उच्च न्यायालय में खारिज कर दी गई है। (पैरा 12)

पैरा

अनुसृत निर्णय

[1985] [1985] जिल्द 2 आल इंग्लैण्ड ला रिपोर्ट्स पृष्ठ 97 :
विल्सन बनाम **कौलचेस्टर जस्टिसेज;** 9

[1982] [1982] 1 उम० नि० प० 836=[1981] 3 एस० सी० आर० 213 :
अहमदाबाद मैन्युफैक्चरिंग एण्ड कैलिको प्रिंटिंग कम्पनी लिमिटेड बनाम **कर्मकार और एक अन्य;** 7

[1979] [1979] 2 उम० नि० प० 1010=[1978] 3 एस० सी० आर० 119 :
कोचीन पत्तन न्यास के कर्मकार बनाम **कोचीन पत्तन न्यास का न्यासीमण्डल और एक अन्य** 6

प्रभेदित निर्णय

[1970] [1970] 2 उम० नि० प० 209=[1970] 1 एस० सी० आर० 322 :

शंकर रामचन्द्र अभ्यंकर बनाम कृष्णाजी दत्तात्रेय बापत 11

सिविल अपीली अधिकारिता : 1985 की सिविल अपील सं० 1257 (एन० एल०).

1983 के सिविल रिट मामला सं० 5877 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 24 जनवरी, 1985 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री एम० के० बनर्जी, डी० एन० मिश्र, बी० डी० बरूचा और ए० एम० दित्तिया
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री एम० के० राममूर्ति और श्रीमती ज्ञान सुधा मिश्र

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति वी० बालकृष्ण इराडी ने दिया।

न्यायमूर्ति बालकृष्ण एराडी—विशेष इजाजत लेकर की गई इस अपील में निनिश्चयार्थ उत्पन्न होने वाला अल्प प्रश्न यह है कि क्या श्रम न्यायालय के अधिनिर्णय को चुनौती देने वाले पक्षकार द्वारा इस न्यायालय के समक्ष फाइल की गई विशेष इजाजत याचिका का आरम्भ में ही खारिज किया जाना उक्त पक्षकार को संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उक्त अधिनिर्णय के अपास्त किए जाने की ईप्सा करते हुए उच्च न्यायालय में जाने से प्रवारित करेगा।

2. अवधारणार्थ उद्भूत होने वाले प्रश्न की प्रकृति का ध्यान रखते हुए हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि हम मामले के तथ्यों का सविस्तार वर्णन करें और उनका संक्षेप में वर्णन करना पर्याप्त होगा। प्रत्यर्थी सं० 3 सन् 1963 में अपीलार्थी—भारतीय तेल निगम की सेवा में विक्रय अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। वह अवचार के आरोपों के परिणामस्वरूप सन् 1969 में पदच्युत कर दिया गया किन्तु बाद में उसे श्रम न्यायालय, पटना जिसके समक्ष एक औद्योगिक विवाद उठाया गया था, के आदेश के अधीन बहाल कर दिया गया। जिस अवधि में प्रत्यर्थी सं० 3 अपनी पदच्युति के कारण नियोजन में नहीं था, उसमें उससे कनिष्ठ कुछ व्यक्ति उच्चतर पदों पर प्रोन्नत कर दिए गए। अपनी बहाली हो जाने के पश्चात् प्रत्यर्थी सं० 3 ने यह दावा किया कि वह उसी तारीख से प्रोन्नति पाने का हकदार है जिसको उससे कनिष्ठ व्यक्तियों को प्रोन्नति दी गई है और उसे उसी तारीख से 1025-1625 रुपये का उच्चतर वेतनमान भी दिया जाना चाहिए। अपीलार्थी ने उसका यह दावा स्वीकार नहीं किया और इसके कारण फिर से एक अन्य औद्योगिक विवाद उद्भूत हुआ। बिहार राज्य सरकार ने उक्त विवाद 26 सितम्बर, 1980 को श्रम न्यायालय, पटना को निर्देशित कर दिया। श्रम न्यायालय ने अपने 11 मार्च, 1983 के अधिनिर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी सं० 3, 30 दिसम्बर, 1970 से उसे 1025-1625 रुपये के वेतनमान में वेतन संदत्त किए जाने का हकदार है जो कि वह तारीख है जिसको उससे

1986(8) eILR(PAT) SC 1

कनिष्ठ व्यक्तियों की प्रोन्नति की गई थी। उसने यह भी निदेश दिया कि तीसरे प्रत्यर्थी को ग्रेड, बी० से ग्रेड, सी० में प्रोन्नति की जाए और उसे उन ग्रेडों के वेतनमानों के पुनरीक्षण का फायदा भी दिया जाए।

3. उक्त अधिनिर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन 1983 की विशेष इजाज़त याचिका सं० 9147 फाइल करके इस न्यायालय को समावेदन किया। प्रत्यर्थी सं० 3 ने इस न्यायालय के समक्ष एक कैवियट फाइल किया और जब विशेष इजाज़त याचिका की सुनवाई हुई तब उसका प्रतिनिधित्व काउंसेल ने किया। इस न्यायालय ने विशेष इजाजत याचिका 9 सितम्बर, 1983 को एक कारण रहित आदेश, जो निम्न प्रकार था, पारित करके खारिज कर दी—

"विशेष इजाज़त याचिका खारिज की जाती है।"

4. तत्पश्चात् अपीलार्थी श्रम न्यायालय के तारीख 11 मार्च, 1983 के उपर्युक्त अधिनिर्णय के अभिखंडित किए जाने की ईप्सा करते हुए संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक रिट याचिका फाइल करके पटना उच्च न्यायालय की शरण में गया। उच्च न्यायालय ने अपने तारीख 31 जनवरी, 1984 के आदेश द्वारा रिट याचिका ग्रहण कर ली तथा अधिनिर्णय के प्रवर्तन के संबंध में अन्तरिम रोक आदेश पारित कर दिया। तत्पश्चात् प्रत्यर्थी सं० 3 रिट याचिका को मंजूर करने और अधिनिर्णय के प्रवर्तन को रोकने वाले उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती देते हुए इस न्यायालय में आया। विशेष इजाज़त याचिका में दी गई मुख्य दलील यह थी कि अपीलार्थी द्वारा श्रम न्यायालय के अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई विशेष इजाज़त याचिका (1984 की विशेष इजाज़त याचिका सं० 2770) को खारिज करने वाले इस न्यायालय के तारीख 9 सितम्बर, 1983 के आदेश को देखते हुए अपीलार्थी को उसी अधिनिर्णय को चुनौती देते हुए संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शपथ में जाने की विधिक रूप से छूट नहीं थी। प्रत्यर्थी सं० 3 द्वारा फाइल की गई विशेष इजाज़त याचिका, इस न्यायालय ने दोनों पक्षों की सुनवाई करके 17 अगस्त, 1984 के निम्नलिखित आदेश द्वारा खारिज कर दी—

"विशेष इजाज़त याचिका खारिज की जाती है। हम आशा करते हैं कि उच्च न्यायालय रिट याचिका का निपटारा यथासंभव शीघ्र वरीयतः आज से 4 महीनों के भीतर, करेगा। इस बीच प्रत्यर्थी आज से दो सप्ताह के भीतर उच्च न्यायालय में 10,000 रुपए की धनराशि और निक्षिप्त करेंगे (जो 5000 रुपए की उस धनराशि से अलग होगी जो याची के खर्चे के संबंध में पहले ही निक्षिप्त की जा चुकी है), जिसे याची, आज से चार महीनों के भीतर रिट याचिका का निपटारा न किए जाने की दशा में, आहरित करने के लिए स्वतंत्र होगा।"

5. बाद में जब रिट याचिका उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आई तब तीसरे प्रत्यर्थी ने रिट याचिका की संपोषणीयता के संबंध में आरम्भिक आपत्ति के रूप में उपर्युक्त दलील फिर से दी। खंड न्यायपीठ ने वह दलील यह मताभिव्यक्ति करते हुए मान्य ठहराई कि अधिनिर्णय के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई विशेष

इजाज़त याचिका की कारण रहित आदेश द्वारा खारिजी अपीलार्थी को संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त अधिनिर्णय को चुनौती देने से प्रवारित करती थी। उच्च न्यायालय की राय में इस मामले को विकल्प का सिद्धांत लागू होता था और चूंकि अपीलार्थी ने वरिष्ठ न्यायालय में समावेदन करने का विकल्प अपनाया और वह अपने प्रयत्न में असफल रहा अतः वह उसके पश्चात् संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार के लिए उच्च न्यायालय की शरण में जाने के अनुकल्पी उपचार का आश्रय नहीं ले सकता था। उच्च न्यायालय द्वारा बताया गया एक अन्य कारण यह है कि चूंकि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की रिट अधिकारिता अनिवार्यतः वैवेकिक प्रकृति की है अतः ऐसी दशा में अनुतोष प्रदान करने से इनकार करना न्यायालय के विवेक का सही प्रयोग होगा। उपर्युक्त तर्कणा के आधार पर उच्च न्यायालय ने मामले के गुणागुण पर विचार किए बिना अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई रिट याचिका खारिज कर दी। अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय द्वारा किए गए विनिश्चय के सही होने को चुनौती दी है।

6. हमारी स्पष्ट राय यह है कि उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया मत सही नहीं था तथा उच्च न्यायालय को रिट याचिका को आरम्भिक आधार पर खारिज किए बिना, उसके गुणागुण पर विचार करना चाहिए था। जैसा कि इस न्यायालय ने **कोचीन पत्तन न्यास के कर्मकार** बनाम **कोचीन पत्तन न्यास का न्यासीमण्डल और एक अन्य**[1] वाले मामले में मताभिव्यक्ति की है, किसी विशेष इजाज़त याचिका की खारिजी के आदेश के प्रभाव की बाबत उस दशा में जब उसके खारिज किए जाने के कारणों को इंगित करने वाली कोई बात न कही गई हो आवश्यक विवक्षा द्वारा, यह माना जाना चाहिए कि वह विशेष इजाज़त दिए जाने के लिए उपयुक्त मामला नहीं था। यह न्यायालय अनेक कारणों से यह निष्कर्ष निकाल सकता था। इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के सकारण आदेश न होने की दशा में यह धारणा करना सही नहीं है कि इस न्यायालय ने इस न्यायालय के समक्ष वाली विशेष इजाजत याचिका में चुनौती के अधीन अधिनिर्णय के गुणागुण से संबंधित सभी प्रश्नों का आवश्यक रूप से विवक्षित रूप से विनिश्चय कर दिया था। रिट कार्यवाही पूर्णतः भिन्न और सुस्पष्ट कार्यवाही है। जिन प्रश्नों की बाबत यह कहा जा सकता है कि इस न्यायालय ने उनका विनिश्चय विशेष इजाज़त याचिका खारिज करते समय अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से अथवा प्रलक्षित रूप से भी कर दिया है, उन पर निस्संदेह उच्च न्यायालय के समक्ष किसी परवर्ती रिट कार्यवाही में पुनर्विचार नहीं किया जा सकता। किन्तु विशेष इजाज़त याचिका को खारिज करने वाला इस न्यायालय का आदेश न तो पूर्व न्याय के सिद्धांत और न ही उसके सदृश किसी लोक नीति के सिद्धांत के आधार पर, किसी पृथक् कार्यवाही, अर्थात् उच्च न्यायालय के समक्ष रिट कार्यवाही, में उठाए गए समरूप मुद्दों के विचारण का वर्जन इस अनिश्चित धारणा मात्र के आधार पर करेगा कि इस न्यायालय ने ऐसे मुद्दों का विनिश्चय कम से कम विवक्षा द्वारा अवश्य कर दिया था। पूर्व न्याय अथवा आन्वयिक पूर्व न्याय के सिद्धांत का इतना विस्तार करना सही अथवा निरापद नहीं है कि वह केवल अनुमान पर आधारित होकर रह जाए।

7. इस न्यायालय ने विधिक स्थिति की इस प्रतिपादना की पुनरावृत्ति [**अहमदाबाद मैन्युफैक्चरिंग एण्ड कैलिको प्रिंटिंग कम्पनी लि०** बनाम **कर्मकार और एक अन्य**[2] वाले मामले

[1] [1979] 2 उम० नि० प० 1010=[1978] 3 एस० सी० आइ० 119.

[2] [1982] 1 उम० नि० प० 836=[1981] 3 एस० सी० आर० 213.

1986(8) eILR(PAT) SC 1

में की है। उपर्युक्त दोनों विनिश्चयों में अधिकथित सिद्धांत इस मामले पर पूरी तरह से लागू होते हैं।

8. उन मामलों को छोड़ कर, जिनमें विधि के अथवा सामान्य या सार्वजनिक महत्व के कुछ सारवान् प्रश्न अन्तर्वलित हों, अथवा जिनमें आक्षेपित आदेश अथवा निर्णय के परिणामस्वरूप स्पष्ट रूप से अन्याय हुआ हो, इस न्यायालय की नीति यह नहीं है कि वह विशेष इजाज़त याचिकाओं पर विचार करे और संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन इजाजत दे। अतः किसी विशेष इजाज़त याचिका की किसी कारण रहित आदेश द्वारा आरम्भ में खारिजी किसी ऐसे निष्कर्ष को न्यायोचित नहीं ठहराती कि विशेष इजाज़त याचिका में दी गई दलीलें इस न्यायालय ने आवश्यक विवक्षा द्वारा मामले के गुणागुण के आधार पर खारिज कर दी हैं। यह मताभिव्यक्ति भी की जा सकती है कि इस न्यायालय में कार्य के भारी बैंक लाग तथा नये मामलों के अंतर्वाह को प्रतिबंधित करने की आवश्यकता का ध्यान रखते हुए उपर्युक्त कसौटी का कठोरता से पालन करते हुए इस न्यायालय की बहुधा यह परिपाटी रही है कि वह उन मामलों में विशेष इजाज़त नहीं देता है जिनमें पक्षकार संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन सम्बद्ध उच्च न्यायालय की शरण में जाकर कारगर अनुतोष का दावा नहीं कर सकता। बहुधा ऐसे मामलों में भी विशेष इजाज़त याचिकाएं कारण रहित आदेश पारित करके, विशेष रूप से इस न्यायालय द्वारा उपर्युक्त दोनों विनिश्चयों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए इन विनिर्णयों का ध्यान रखते हुए खारिज कर दी जाती हैं कि विशेष इजाज़त याचिका की ऐसी खारिजी के परिणामस्वरूप पक्षकार संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष की ईप्सा करने के संबंध में उच्च न्यायालय को समावेदन करने से प्रवारित नहीं होगा। ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय द्वारा याची के लिए अपना द्वार बन्द करने तथा विशेष इजाज़त याचिका की खारिजी के एक मात्र आधार पर उसे संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष प्रदान करने से इनकार करने के परिणामस्वरूप अत्यधिक कठिनाई और अन्याय की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी।

9. **विल्सन** बनाम **कौलचेस्टर जस्टिसेज**[1] वाले मामले में हाउस आफ लार्ड्स को इस प्रश्न पर विचार करना पड़ा था कि क्या हाउस आफ लार्ड्स की अपील कमेटी द्वारा अपील करने की इजाज़त देने से इनकार किए जाने से किसी ऐसे विनिश्चय के विवक्षित अनुमोदन का गठन होगा जिसे आक्षेपित करने में सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। हमारे वर्तमान प्रसंग में लार्ड रौस्किल की निम्नलिखित मताभिव्यक्तियां बहुत उपयुक्त हैं—

> "प्रकटतः खंड न्यायालय ने यह महसूस किया था कि इस इनकार से कम से कम उस विनिश्चय का विवक्षित अनुमोदन इंगित होता है जिसे आक्षेपित करने की असफलतापूर्वक ईप्सा की गई थी। काउंसेल ने सम्माननीय लार्डों को यह कह कर आश्चर्यचकित कर दिया कि यह धारणा न्यायालयीन वृत्ति में सुव्याप्त है। सम्माननीय लार्डों, यदि ऐसी ही स्थिति है तो जैसा कि मेरे विद्वान् मित्र लार्ड डिप्लोक ने जिरह के दौरान कहा है, यह गलत धारणा जितने बलपूर्वक ठीक कर दी जाए उतना ही अच्छा है। इस बात के अनेक कारण हैं कि किसी विशेष मामले में अपील कमेटी अपील करने की इजाज़त देने से क्यों इनकार कर देती है। मैं इस संबंध में

---

[1] [1985] जिल्द 2 आल इंग्लैंड लॉ रिपोर्ट्स पृ० 97.

सर्वांगपूर्ण सूची देने का प्रयत्न नहीं करूंगा क्योंकि ऐसा करना असंभव होगा। एक कारण यह हो सकता है कि किसी विशेष मामले में व्यापक सिद्धांत का कोई प्रश्न उद्भूत न होकर केवल उस मामले के तथ्यों से ही संबंधित प्रश्न उत्पन्न होता हो। एक अन्य कारण यह हो सकता है कि किसी विशेष मामले के तथ्य व्यापक सिद्धांत के किसी प्रश्न का अवधारण करने का उपयुक्त आधार न हों। सम्माननीय लार्ड किसी वर्ष विशेष में सीमित संख्या में ही मामलों की सुनवाई और उनका अवधारण कर सकते हैं और किसी समग्र विधि के उद्भव के लिए यह महत्वपूर्ण है कि उन मामलों का चयन सावधानीपूर्वक किया जाए। इसके विपरीत यह तथ्य कि अपील करने की इजाज़त दी गई है, स्वयंमेव इस बात का कोई संकेत नहीं है कि निचले न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय गलत माना गया है। यह भी संभव है कि इजाज़त इसीलिए दी गई हो ताकि सुसंगत विधि अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट शब्दों में और प्राधिकारवान् रूप से पुनः कथित की जा सके। पुस्तकों में ऐसे मामलों के उदाहरण तलाश करने कठिन नहीं हैं जिनमें एक दशा में अपील करने की इजाज़त देने से इनकार के पश्चात् एक ऐसी अन्य दशा उत्पन्न हुई हो जिसमें अपील करने की इजाज़त दी गई हो जिसके परिणामस्वरूप वह विनिश्चय जिसके विरुद्ध अपील करने की इजाज़त देने से आरम्भ में इंकार कर दिया गया था, गलत सिद्ध हो जाए। किन्तु इसका स्वयमेव यह तात्पर्य नहीं है कि इजाज़त देने से आरम्भ में किया गया इनकार गलत था।"

10. इस प्रकार सही विधिक स्थिति यह है कि इस न्यायालय द्वारा अपने तारीख 9 सितम्बर, 1983 के कारणरहित आदेश द्वारा 1983 की विशेष इजाज़त याचिका सं० 9147 का खारिज किया जाना संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का आश्रय लेकर अपीलार्थी द्वारा श्रम न्यायालय के आक्षेपित अधिनिर्णय को चुनौती दिए जाने के मामले में वर्जन के रूप में लागू नहीं होता था।

11. वर्तमान स्थिति में उच्च न्यायालय द्वारा निर्दिष्ट विकल्प का सिद्धांत बिल्कुल भी लागू नहीं होता तथा **शंकर रामचन्द्र अभ्यंकर** बनाम **कृष्णाजी दत्तात्रेय बापत**[1] वाले मामले में का विनिश्चय स्पष्ट रूप से प्रभेद्य है। उस मामले में उद्भूत होने वाला प्रश्न यह था कि क्या वह पक्षकार जिसके पास एक ही न्यायालय, यथा उच्च न्यायालय, के समक्ष दो उपचारों में से एक उपचार का आश्रय लेने का विकल्प था, बाद में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन और फिर संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन उच्च न्यायालय में समावेदन कर सकता था। इस एक ही कारण से इस प्रश्न का नकारात्मक उत्तर दिया गया कि पहली कार्यवाही के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश पक्षकारों के बीच के मामले का निपटारा कर देगा। ऐसी दशा में पक्षकार को अपने विकल्प का प्रयोग करके उस उपचार का विकल्प देना था जिसका आश्रय वह उच्च न्यायालय में लेता।

12. संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इजाज़त का दिया जाना निस्संदेह उच्च न्यायालय का विवेकाधिकार है किन्तु इस वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग सुस्थापित विधिक सिद्धांतों द्वारा नियंत्रित किया जाना है। इस विवेकाधिकार का प्रयोग उस दशा में सही

[1] [1970] 2 उम० नि० प० 209=[1970] 1 एस० सी० आर० 322.

प्रयोग नहीं होगा जब किसी रिट याचिका पर उसके गुणागुण के आधार पर विचार करने से केवल इस आधार पर इनकार कर दिया जाए कि याची द्वारा फाइल की गई विशेष इजाज़त याचिका किसी कारणरहित आदेश द्वारा उच्च न्यायालय में खारिज कर दी गई है।

13. उपर्युक्त बातों के अलावा इस मामले में एक तथ्य यह भी है कि उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका ग्रहण कर ली जाने के बाद तीसरे प्रत्यर्थी ने उच्च न्यायालय के रिट याचिका को ग्रहण करने तथा इस न्यायालय में विशेष इजाज़त याचिका फाइल करके अधिनिर्णय के अन्तरिम रूप से रोके जाने की मंजूरी देने वाले उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती दी। उस विशेष इजाज़त याचिका में तीसरे प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई पहली विशेष इजाज़त याचिका की खारिजी के प्रकाश में रिट याचिका को चलाए जाने के संबंध में वही आपत्ति उठाई। इस न्यायालय ने विशेष इजाज़त याचिका खारिज कर दी और उच्च न्यायालय से आदेश की तारीख (17-8-1984) से चार महीनों के भीतर रिट याचिका का निपटारा करने की प्रार्थना की। उस आदेश को पारित करने में इस न्यायालय का आशय स्पष्टतः यह था कि उच्च न्यायालय उक्त अवधि के भीतर गुणागुण के आधार पर रिट याचिका पर विचार करता और उसका निपटारा करता। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उच्च न्यायालय के अपीलाधीन निर्णय में इस आदेश का ध्यान नहीं रखा गया है।

14. उपर्युक्त चर्चा के प्रकाश में हम इस अपील को मंजूर करते हैं, उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त करते हैं तथा गुणागुण के आधार पर निपटारे के लिए रिट याचिका को उच्च न्यायालय को प्रतिप्रेषित करते हैं। इस तथ्य का ध्यान रखते हुए कि मामला तीसरे पक्षकार द्वारा दावाकृत सेवा के फायदों से सम्बद्ध है अतः उच्च न्यायालय से याचिका का निपटारा यथासंभव शीघ्र करने की प्रार्थना की जाती है। पक्षकार अपना-अपना खर्च स्वयं वहन करेंगे।

अपील मंजूर की गई।

अ०/चन्द